R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-7 रुपये, वर्ष-23, अङ्क-3 मार्च 2023 1

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

॥ विभाव का ईंधन जलावें वन में, मधुवन में.... ॥

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन

सत्र 23-24 प्रवेश प्रारंभ

(फार्म जमा करने की अन्तिम तिथि - 15 मार्च 2023;
प्रवेश साक्षात्कार शिविर 26 मार्च से 31 मार्च 2023)

सद्धर्म प्रेमी बन्धुवर सादर जयजिनेन्द्र,

प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन मङ्गलायतन में प्रवेश प्रक्रिया प्रारंभ हो चुकी है। वर्तमान युग में अपने कोमलमति बालक और युवाओं में धर्म, संस्कार एवं नैतिक शिक्षा के साथ उच्च शिक्षा देना चाहते हो तो अवश्य ही 15 मार्च 2023 तक अपने प्रवेश फार्म मङ्गलायतन ऑफिस में जमा करायें।

तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन लगातार उन्नति के शिखर को छू रहा है। यहाँ से निकले मङ्गलार्थी उच्च स्तर की प्रशासनिक एवं राष्ट्रीय सेवाएँ देते हुए समाज को तत्त्वज्ञान की शिक्षा दे रहे हैं। स्व-पर कल्याण करते हुए वीतरागी जिनमार्ग को घर-घर पहुँचा रहे हैं।

यदि आप भी चाहते हैं कि आज की पीढ़ी पाप के दलदल में न फँसे, सन्तोषपूर्वक आत्मकल्याण करते हुए अपना जीवन सफल करे तो अवश्य ही भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन में अपने बालकों का प्रवेश करायें।

प्रवेश के योग्य अभ्यार्थी की पात्रता

(1) सातवीं कक्षा में कम से कम 60 प्रतिशत अंक से पास हो। (2) फार्म भरते समय छठी कक्षा में भी कम से कम 60 प्रतिशत अंक हों। (3) सातवीं कक्षा में अंग्रेजी माध्यम से ही पढ़ता हो। (4) शरीर में कोई असाध्य रोग न हो। (5) जैन धर्मानुसार अभक्ष्य भक्षण नहीं करता हो। (6) जैन धर्म पढ़ने की रुचि रखता हो।

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन की विशेषताएँ

(1) पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा उद्घाटित वीतरागी तत्त्वज्ञान का गहरा अध्ययन। (2) धार्मिक, नैतिक, सांस्कारिक, सामाजिक, लौकिक, पारलौकिक, आध्यात्मिक, सैद्धांतिक आदि विद्याध्ययन करने का अवसर। (3) भारत के उच्चतम स्कूल डी.पी.एस. में पढ़ने का अवसर। (4) विश्व के प्रसिद्ध विद्वानों से अध्ययन करने का अवसर। (5) चहुँमुखी प्रतिभा एवं विकास के साधन (6) डी.पी.एस. के माध्यम से विश्वस्तरीय खेल, प्रतिस्पर्धा एवं व्यक्तित्व विकास का अवसर। (7) खेल एवं संगीत शिक्षा की विशेष व्यवस्था। (8) मङ्गलायतन द्वारा देश-विदेश में तत्त्वज्ञान आराधना / प्रभावना करने का अवसर। (9) आत्मसम्मान एवं जिनधर्म की शिक्षापूर्वक उच्च आजीविका का अवसर।

शीघ्र ही आप अपने बालकों का फार्म भरकर, तीर्थधाम मङ्गलायतन के पते पर कोरियर द्वारा 2,100 रुपये के ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

कोरियर भेजने का पता —

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, तीर्थधाम मङ्गलायतन
द्वारा श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरा रोड, अलीगढ़ - 202001 (उ.प्र.)
मोबा : 9756633800, 7581060200, 8279559830

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-23, अङ्क-3 (वी.नि.सं. 2549; वि.सं. 2079) मार्च 2023

होली खेलें मुनिराज.....

होली खेलें मुनिराज शिखर वन में,
रे अकेले वन में..... मधुवन में।
मधुवन में आज मची रे होली मधुवन में।
काहे की उनने होली बनाई
काहे की आग लगाई वन में, मधुवन में॥
अष्ट कर्म की होली बनाई,
ज्ञान की अग्नि लगाई वन में, मधुवन में॥
काहे का उनने रंग बनायो
काहे की गुलाल उड़ाई वन में।
रत्नत्रय का रंग बनायो,
समता गुलाल उड़ाई वन में, मधुवन में॥
काहे की उनने पिचकारी बनाई,
चेतन संग होली खेले वन में, मधुवन में॥
बार बार हम वंदन करते,
शीश चरण में उनके धरते।
ध्यान की धुनी लगाये वन में, मधुवन में॥
ऐसी होली हमहूँ खेलें
यही भावना मन में, मधुवन में॥
मधुवन में आज मची रे होली मधुवन में॥

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

इस अङ्क के प्रकाशन में सहयोग–

स्व. श्री सुमतिचन्द्र एवं माता श्रीमती इन्द्राणी देवी की स्मृति में श्रीयुत अजय, विजय, रतन, पवन जैन मुम्बई–दिल्ली–हाथरस

शुल्क :
एक प्रति : 07.00 ₹
आजीवन (15 वर्ष) : 1000.00 ₹

क्या - कहाँ

देशव्रतोद्योतनम् 5
श्री समयसार नाटक 18
श्रुत परम्परा एवं 23
कवि परिचय 25
बाल वाटिका 26
जिस प्रकार–उसी प्रकार 27
समाचार–दर्शन 29

श्री पद्मनंदी आचार्य कृत श्री पद्मनंदी पंचविंशतिका के
देशव्रतोद्यन नामक अधिकार पर सत्पुरुषश्री कानजीस्वामी का प्रवचन

देशव्रतोद्योतनम्

(श्रावण वदी १४, मंगलवार, ता० १६-५-५५)

आत्मभान पूर्वक मुनिपना अंगीकार न किया जा सके तो श्रावक बनना चाहिए।

इस 'पद्मनंदि पंचविंशतिका' शास्त्र के पच्चीस अधिकार में से ७ वें अधिकार में श्रावक के गुणों का वर्णन किया गया है। श्रावक को प्रथम सम्यग्दर्शन प्राप्त करना चाहिए। आत्मा आनन्द-कन्द है, ऐसी श्रद्धा करनी चाहिए और स्वभाव में से मेरी पूर्ण दशा प्रगट होगी—ऐसा निर्णय करना चाहिए। सम्यग्दर्शन उत्पन्न होना ही जैन-कुल में जन्म लेना है। आत्मा पूर्ण ज्ञान और आनन्दस्वभावी है, इस भानसहित वर्तमान रागादि में हेयभाव वर्तते ही सम्यग्दर्शन होता है। सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के पश्चात् उसके रक्षार्थ प्रयत्न करने चाहिए। आत्मा शुद्ध चैतन्यस्वभावी है, उसकी तरफ दृष्टि करके आत्मभानपूर्वक नग्न दिगम्बर बनना चाहिए। मुनिधर्म अंगीकार न किया जा सके तो आत्मा की आंतरिक पुरुषार्थ की पर्याय श्रावक के अनुरूप प्रगट करनी चाहिए।

गाथा-४

सम्प्राप्तेऽत्र भवे कथं कथमपि द्राधीयसाऽनेहसा।
मानुष्ये शुचिदर्शने च महता कार्य तपो मोक्षदम्॥
नो चेल्लोकनिषेधतोऽथ महतो मोहादशक्तेरथ।
सम्पद्येत न तत्तदा गृहवतां षटकर्मयोग्यं व्रतम्॥४॥

दुर्लभ मनुष्य भव में सम्यग्दर्शनपूर्वक श्रावक के षट्कर्म करने चाहिए।

देखो, क्या कहते हैं? मेरी आत्मा परमात्मा है, ऐसी दृष्टि करनी चाहिए। अनादि से अनंत काल व्यतीत हो गया, उसमें मनुष्य भव अनंत काल में मिलता है। व्यापार, पैसा, जवाहरात, आदि मिलना दुर्लभ नहीं कहलाता। वे तो अनेक बार मिल गए हैं। इस संसार में पुण्य परिणाम से

मनुष्य जन्म मिला है। किन्तु पुण्य-पाप मेरे नहीं हैं, शरीर मेरा नहीं है, मैं ज्ञानस्वभावी हूँ—ऐसा सम्यग्दर्शन प्राप्त करना चाहिए। ऐसी प्रतीतिवाले को मुनिदशा अंगीकार करनी चाहिए। यह शरीर क्षणभंगुर है—ऐसा विचारकर केवलज्ञान का निकट कारण चारित्रदशा प्रगट करनी चाहिए। उस अन्तर विकसित अवस्था में बाह्य वस्त्र-पात्र छूटकर दिगम्बरदशा हो जाती है। ऐसा होने में यदि वर्तमान में लज्जा आती हो और तत्परिणामस्वरूप मुनिपना न अपनाया जा सके अथवा आनन्द की उर्मियाँ आवें—ऐसा पुरुषार्थ न हो और चारित्रमोह के उदय से अस्थिरता-निर्बलता हो, जिनके कारण मुनिपना न लिया जा सके तो श्रावक के षट्कर्म अवश्य करने चाहिए।

धर्मात्मा को जिनेन्द्र भगवान के प्रति बहुमान, विनय और पूजा का भाव आता है।

देव पूजा—आत्मा ज्ञानानंदस्वभावी है—ऐसी दिव्यशक्ति की जिसे प्रतीति हुई हो, उसे जब तक पूर्ण दशा प्राप्त न हो, तब तक जिनेन्द्रदेव की पूजन करनी चाहिए। सम्यक्त्वी श्रावक को उनकी पूजा करने के भाव आते हैं। मुनि भी भावपूजा करते हैं। श्रावक सेवक बनकर पूजा करते हैं। जिसके अंतरंग में ज्ञानस्वभाव का भान है, वह कहता है—हे नाथ! तेरे विरह में अनंत काल बीत गया। हे प्रभु! अब कृपा करो और मेरे जनम-मरण का अन्त कर दो। जन्म-मरण का अन्त अपनी आत्मा से ही होता है किन्तु अपूर्ण अवस्था में भगवान की पूजा का भाव होता है। स्वयंभू स्तोत्र में समंतभद्र आचार्य अनेक प्रकार से स्तुति करते हैं। जिसे आत्मा का भान है, उसे पूर्ण दशा प्राप्त भगवान की स्तुति करने के भाव आते हैं। ''हे नाथ! आपको पूर्ण आनन्द मिल गया, आपमें अल्पज्ञता और विकार नहीं रहे, अब करुणा करें।'' ऐसे नम्र वचन निकले बिना नहीं रहते। श्री ऋषभदेव भगवान की स्तुति में कहा है—''हे नाथ, आप मुनि बने और तत्पश्चात् मोक्ष पधारे, तब कहते हैं कि आपकी शोभा ही सर्वत्र व्याप्त हो रही थी। नदियों की भी कलकल ध्वनि आपके वियोग में रो रही है तो फिर हम रोवें तो इसमें क्या आश्चर्य?'' इसी प्रकार भक्तो का रोमांच भक्ति में उल्लसित

होता है। सम्यग्दृष्टि को साक्षात् परमात्मा और उनकी प्रतिमा के प्रति बहुमान आए बिना नहीं रहता। स्त्री की मृत्यु हो जाने पर अज्ञानी पति उसकी फोटो देखकर उसे याद करता है। किसी की प्रिय स्त्री मर गई थी, उसने मान लिया कि वह मरकर उसी के घर में कामधेनु बनी है। उसने उस गाय की मृत्यु होने पर उसकी स्मृति में अठारह हजार में मन्दिर बनाया और इसप्रकार याद करने लगा—'हे माता! मैं तुझे भूल गया था, मैं तुझे पहचान नहीं सका, मन्दिर में कामधेनु की मूर्ति रखना तो मूढ़ता है, भ्रांति है। जिससे प्रेम है, उसके प्रति बार-बार प्रेमभाव आए बिना नहीं रहता। जिसे अपनी माता के प्रति प्रेम रहता है, वह चाहता है कि मेरी माँ का नाम रहना चाहिए। अपने दिवंगत पिताजी को लोग याद करते हैं। उसी प्रकार धर्मी को भगवान तीर्थंकर के विरह में उनकी प्रतिमा के प्रति शुभराग आए बिना नहीं रहता। वह समझता है कि देव पूजा है, सो पुण्य है। जिस घर में भगवान की स्तुति, भक्ति नहीं की जाती, वह घर कसाईखाने के समान है।

जो श्रावक छह आवश्यक कर्म नहीं करता, उसके गृहस्थाश्रम को धिक्कार है।

आचार्य पद्मनन्दि ने श्रावकाचार की १५ वीं गाथा में कहा है कि जो मनुष्य, जिनेन्द्र भगवान की भक्ति नहीं करता तथा भक्तिपूर्वक उनकी पूजा, स्तुति नहीं करता, उस मनुष्य का जीवन निष्फल है तथा उसके गृहस्थाश्रम को धिक्कार है। निर्ग्रन्थ वनवासी मुनि भी कहते हैं कि उन्हें धिक्कार है। आगे गाथा १६-१७ में कहा है कि 'भव्य जीवों को प्रातःकाल उठकर श्री जिनेन्द्रदेव तथा गुरु के दर्शन करना चाहिए तथा भक्तिपूर्वक उनकी वन्दना-स्तुति करना चाहिए तथा धर्म शास्त्र सुनने चाहिए। तत्पश्चात् गृह कार्य करने चाहिए। गणधरादि महान् पुरुषों ने धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार पुरुषार्थों में सर्व प्रथम वीतरागभावरूप धर्म का निरूपण किया तथा उसको मुख्य माना है।'

आगे गाथा १८ वीं में कहा है कि जिस केवलज्ञानरूपी नेत्र से समस्त पदार्थ हाथ की रेखा की तरह प्रगटरूप में दृष्टिगोचर होते हैं—ऐसा वह ज्ञानरूपी नेत्र निर्ग्रन्थ गुरु की कृपा से प्राप्त होता है। इसलिए ज्ञान के

आकांक्षी मनुष्यों को भक्तिपूर्वक निर्ग्रन्थ गुरु की सेवा, वन्दना आदि करनी चाहिए। आगे गाथा २० में आचार्य ने कहा है कि हमेशा स्वाध्याय करना चाहिए। 'जो मनुष्य उत्तम तथा निष्कलंक गुरु द्वारा रचित शास्त्र नहीं पढ़ते, वे मनुष्य विद्वान होते हुए भी अन्धे माने जाते हैं।' यह कथन अज्ञानी द्वारा कथित या रचित शास्त्र के सम्बन्ध में नहीं है। जो शास्त्र नहीं पढ़ते, अध्ययन नहीं करते, वे अन्धे हैं। अतः यथाशक्ति स्वाध्याय करना चाहिए। किन्तु स्वाध्याय ज्ञानी पुरुषों द्वारा कथित शास्त्रों का ही करना चाहिए।

आगे गाथा २१ वीं में आचार्य ने कहा है कि जो मनुष्य, गुरु के पास रहकर शास्त्र श्रवण नहीं करते हैं और ज्ञान को हृदय में धारण नहीं करते, उनके कान और मन नहीं है—ऐसा मैं मानता हूँ। जैसे चींटी के कान और मन नहीं है, उसी प्रकार उनके नहीं है। कान और मन होते हुए भी अगर उसका सद्-उपयोग न किया तो न होने के समान ही हैं।

गाथा २२ वीं में कहा है कि धर्मात्मा श्रावकों को देशव्रत के अनुसार संयम धारण करना चाहिए, ऐसा करने से व्रत सफल होते हैं। इच्छा की कमी करनी चाहिए व दान देना चाहिए।

गाथा ३१ वीं में कहा गया है कि 'धर्मात्मा गृहस्थों को मुनि आदि उत्तम पात्रों को अपनी शक्ति के अनुसार दान अवश्य देना चाहिए क्योंकि दान दिए बिना गृहस्थाश्रम व्यर्थ है।

गाथा ३४ वीं में आचार्य कहते हैं कि जो समर्थ होते हुये भी आदरपूर्वक यतीश्वरों को दान नहीं देते वे मूर्ख अपने आगामी जन्म में प्राप्त होनेवाले सुख का नाश करते हैं। राग घटाकर मुनि आदि सत्पात्रों को दान देना चाहिए।

इस ग्रन्थ के श्रावकाचार की गाथा ७ वीं इसप्रकार हैं—

देवपूजा गुरुपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दानञ्चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिनेदिने॥

यहाँ आचार्य इन कामों को 'दिने-दिने' करने के लिये कहते हैं। जिस प्रकार खाने-पीने आदि के कार्य प्रतिदिन किए जाते हैं, उसी प्रकार प्रतिदिन दान देना चाहिए।

श्रावकाचार की गाथा ३५ में कहा गया है कि जिस गृहस्थाश्रम में दान नहीं दिया जाता, वह गृहस्थाश्रम पत्थर की नाव के समान है और उस गृहस्थाश्रमरूपी पत्थर की नाव में बैठनेवाले निश्चय ही संसाररूपी समुद्र में डूबते हैं। जैसे पत्थर की नाव डूबती है, वैसे ही वे भी डूब जाते हैं, अर्थात् संसार में भ्रमण करते रहते हैं।

आगे गाथा ३६ में आचार्य कहते हैं कि जिसे धर्म-भावना प्रगट हुई, उसे धर्मी के प्रति प्रीति होनी चाहिए। धर्म धार्मिकों बिना नहीं होता। जो मनुष्य, साधर्मी सज्जनों से शक्ति के अनुसार प्रेम नहीं करते, उनकी आत्मा प्रबल पाप से ढकी हुई है तथा वे धर्म विमुख हैं तथा धर्म के अभिलाषी भी नहीं हैं। इसलिए भव्य जीवों को साधर्मी सज्जनों के साथ अवश्य प्रेम करना चाहिए।

भावार्थ—इस संसार में इस जीव का प्रथम तो निगोदादिक पर्यायों से निकलना अत्यन्त कठिन है। फिर वहाँ से निकल भी जाये तो पृथ्वीकाय, जलकाय आदि एकेन्द्रिय पर्याय पावे। एकेन्द्रिय में अनन्त काल व्यतीत हुए बाद कठिनता से कौआ आदि त्रस पर्यायों में उत्पन्न होता है। फिर उन पर्यायों में से निकलकर मनुष्य पर्याय की प्राप्ति कठिन है, और अगर मिल भी जाये तो भगवान द्वारा कहे हुए तत्त्व का श्रवणगोचर होना कठिन है। श्रवणगोचर हो जाये तो सम्यग्दर्शन होना कठिन है और सम्यग्दर्शन हो जाये तो उसकी रक्षा करने में जीव प्रमाद करता है। इससे सम्यग्दर्शन हुआ न हुए के समान है। इसलिये आचार्य उपदेश देते हैं कि अगर सौभाग्य से मनुष्य भव और सम्यग्दर्शन प्राप्त हो तो उत्तम पुरुषों को प्रमादभाव छोड़कर तप करना चाहिए। तप अर्थात् मुनिपना ग्रहण करना चाहिए। अगर अपनी अस्थिरता या नग्नता की लज्जा के कारण मुनि न हो सके तो श्रावक के छह कर्म अवश्य करने चाहिए; किंतु मनुष्यजन्म और सम्यग्दर्शन व्यर्थ नहीं खो देना चाहिए।

अब बारह व्रतों का वर्णन किया जाता है। सम्यग्दर्शनपूर्वक, षट्कर्म और बारह व्रत होते हैं और वे व्रत गृहस्थों के लिये पुण्य के कारण हैं—ऐसा आचार्य बताते हैं।

गाथा-५

दृङमूलव्रतमष्टधा तदनु च स्यात्पञ्चधाणुव्रतं।
शीलाख्यं च गुणव्रतं त्रयमतः शिक्षाश्चतस्त्रः पराः॥
रात्रौ भोजनवर्जनं शुचिपटात्पेयंपयः शक्तितः।
मौनादिव्रतमप्यनुष्ठितमिदं पुण्याय भव्यात्मनाम्॥५॥

श्रावक को आत्मभानपूर्वक बारह व्रत करने का शुभ राग आता है।

देखो, पद्मनिन्द आचार्य स्पष्ट कहते हैं कि धर्मी जीव के १२ व्रत पुण्यकारक हैं, अशुभ से बचने के लिए पुण्यभाव आते हैं। वे पुण्यपरिणाम हैं किन्तु धर्म नहीं हैं। सम्यग्दृष्टि के मद्य, मांस, मदिरा, पाँच उदम्बर फल छोड़ने का भाव होता है, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्यादि पाँच अणुव्रत धारण करना और दिग्व्रत आदि गुणव्रत तथा देशावकाशिक आदि चार शिक्षाव्रतों के पालन करना तथा रात में स्वाद्य आदि चार प्रकार के भोजन का त्याग करना, स्वच्छ कपड़े से छाना हुआ पानी पीना, तथा शक्ति के अनुसार मौन आदि व्रत धारण करना, इस प्रकार ये श्रावक के व्रत हैं। भली प्रकार किए हुए व्रत भी पुण्य के कारण हैं; इसलिए धर्मात्मा श्रावकों के व्रत का पालन आत्मा के भानपूर्वक होता है। आजकल मुख्य बात तो उड़ गई है और व्यवहार कथन को पकड़ लेते हैं। साथ में सम्यग्दर्शन हो तो व्रत सच्चे व्रत कहलाते हैं, अन्यथा नहीं। अशुभ से बचने के लिए ऐसा शुभराग आता है। चरणानुयोग में, उसका पालन करो—ऐसा कहते हैं।

देशव्रती श्रावक इस प्रकार व्रतों को धारण करता है।

गाथा-६

हन्ति स्थावरदेहिनः स्वनिषये सर्वास्त्रसान् रक्षति।
ब्रूते सत्यमचौर्यवृत्तिमबलां शुद्धां निजां सेवते॥
दिग्देशव्रतदण्डवर्जनमतः सामायिकं प्रौषधं।
दानं भोगयुगं प्रमाणमुररीकुर्याद् गृहीति व्रती॥६॥

श्रावक को त्रस जीवों की रक्षा का भाव आता है।

व्रती श्रावक अपने प्रयोजन के लिये पृथ्वी आदि स्थावर जीवों की

हिंसा करता है अर्थात् मारने का भाव होता है, दूसरे को मार सकता हो—ऐसी बात नहीं है। मुनि अवस्था नहीं है, इसलिए श्रावक अवस्था में पाँच स्थावरकाय के जीवों को मारने का भाव आता है तथा द्विइन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय त्रसजीवों की रक्षा करता है, परजीवों की रक्षा कर सकता हो, यह बात नहीं है, किन्तु उनकी रक्षा का भाव आता है, इसलिए उनकी रक्षा करता है—ऐसा चरणानुयोग में कथन आता है। मेरा स्वभाव वीतरागी है, यह अन्तर्दृष्टि है; राग की उत्पत्ति हिंसा है, इतना होते हुए भी इतना जानते हुए भी बारह व्रत का, श्रावकावस्था में राग आये बिना नहीं रहता। त्रसजीवों की रक्षा करता है अर्थात् त्रसजीवों को मारने का भाव नहीं करता। शास्त्र का कथन समझना चाहिए। आचार्य आगे कहेंगे कि मेरे में सर्वज्ञशक्ति की प्रतीति है जो, थोड़ा रागद्वेष है, उसे भी छोड़ना चाहता हूँ; इसलिए उसे कर्मजनित कह देते हैं। अपने आत्मस्वभाव से हमें विकार नहीं होता किन्तु निर्बलता से हुए विकार त्रिकालिक सबल स्वभाव की दृष्टि द्वारा कर्मकृत कह दिए जाते हैं; इसलिए अपेक्षा समझनी चाहिए। श्रावक के सत्य बोलने, अचौर्य व्रत पालन करने का भाव होता है, परस्त्री गमन का भाव नहीं होता किन्तु अपनी स्त्री के प्रति राग नहीं छूटता। वह दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्डव्रत का पालन करता है।

श्रावक आत्मास्वभाव में स्थिर रहने का प्रयोग करता है।

वह सामायिक करता है। सामायिक, केवलज्ञान और चारित्र प्रगट करने का प्रयोग है। जैसे व्यापार में अभ्यास किया जाता है, परीक्षा करने के लिए लड़के को दुकान पर बैठाते हैं; उसी प्रकार धर्मात्मा भी अभ्यास करता है। आत्मा आनन्दकन्दस्वरूप है, सामायिक में दो घड़ी के लिये उस स्वरूप में स्थिर रहने का श्रावक अभ्यास करता है। स्वरूप में स्थिरता का २४ घण्टे के लिये अभ्यास करना प्रौषधोपवास है। शरीर छूटते समय अन्तिम अभ्यास सल्लेखना है। 'आत्मा, देह रहित है'—ऐसी दृष्टि रखकर दो घड़ी के लिये प्रयोग या अभ्यास करना सामायिक है, अधिक अभ्यास करना प्रौषधोपवास है। एक आसन पर बैठे रहना या सामायिकपाठ मात्र बोल जाना सामायिक

नहीं है और मात्र भोजन न करना प्रौषधोपवास नहीं है। श्रावक, आत्मा के भानपूर्वक प्रौषध का अभ्यास करता है।

गृहस्थ श्रावक सच्चे मुनि, साधर्मी, संत आदि को दान देने का भाव करता है। साधर्मी भाई की सेवा करने का भाव आये तो श्रावकत्व सच्चा कहलाता है। श्रावक भोगोपभोग में भी परिमाण करता है। स्वरूप की मर्यादा ध्यान में आवे, इसलिये विशेष राग नहीं हो और राग घटे, तभी श्रावकत्व सुशोभित होता है, अन्यथा नहीं।

गृहस्थ के देव पूजा आदि गुण हैं, उनमें दान सबसे उत्तम गुण है, यह आचार्य बतलाते हैं।

गाथा-७

देवाराधनपूजनादिबहुषु व्यापारकार्येषु च।
पुण्योपार्जनहेतुषु प्रतिदिनं संजायमानेष्वषि॥
संसारावर्णवतारणे प्रवहणं सत्पात्रमुद्दिश्य यत्।
देशव्रतधारिणो धनव्रतोदानं प्रकृष्टो गुणः॥७॥

लोभरूपी कुएँ की कन्दरा में गिरे हुए जीवों के कल्याणार्थ मुनि, दान का उपदेश देते हैं।

पद्मनन्दि आचार्य नग्न दिगम्बरदशावाले हैं। संसारी जीव लोभरूपी कन्दरा में गिर गए हैं, उन पर करुणा करके उनके उद्धार के लिए आचार्य ने दान अधिकार लिखा है। दान अधिकार की चौथी गाथा में कहा है—''अत्यन्त दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर तथा जीवन, यौवन आदि के स्वप्नवत तथा इन्द्रजाल सदृश होते हुए भी जो मनुष्य लोभरूपी कुएँ की कन्दरा में गिरे हुए हैं, उनके उद्धार के लिए करुणा करके यह दान अधिकार कहता हूँ।'' लोभी जीव लोभरूपी खाई में गिर गए हैं, उन पर आचार्य करुणा करते हैं। वे कहते हैं कि हमें क्या? किन्तु लोभ में फँसे हुए जीवों के लिए दान अधिकार लिखते हैं। लोग अपनी सन्तान के विवाह में रुपया खर्च करते हैं तो, मन्दिरजी आदि के लिए भी धन खर्च

करना चाहिये किन्तु लोभी जीव थोड़ा-सा भी दान नहीं करता।

जिनेन्द्रदेव की पूजा आदि कर्त्तव्यों में दान उत्तम कार्य है।

धनवान और धर्मात्मा श्रावक, श्रेष्ठ पुण्य का संचय करनेवाले जिनेन्द्रदेव की पूजा, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, आदि अनेक उत्तम कार्य सर्वदा करते रहते हैं। स्वभाव पर दृष्टि है, इसलिये दान के शुभराग को संसार समुद्र से पार करने के लिये जहाज कहा है; इसलिये श्रेष्ठ मुनि आदि सत्पात्रों को दान देना चाहिए। दान धर्मात्मा का, श्रावक का उत्तम गुण है।

जो लोभी दान में लक्ष्मी का उपयोग नहीं करता, वह कौए से भी हल्का है।

दान अधिकार में कौए का दृष्टान्त आया है। खिचड़ी पकाते समय जो जलकर बर्तन में चिपक जाती है, वह जला हुआ अंश कौवे को देते हैं तो उसे कौआ अकेला नहीं खाता किन्तु दूसरे कौओं को बुलाकर खाता है। दान अधिकार की ४६ वीं गाथा में कहा है—

''जो लोभी पुरुष, भोग तथा दानरहित धनरूपी बन्धन से बंधा हुआ है, उस कंजूस का जीवन इस लोक में व्यर्थ है क्योंकि उसकी अपेक्षा तो वह कौआ ही अच्छा है जो ऊँचे स्वर से अन्य कौओं को बुलाकर उनके साथ भोजन करता है।'' हे धनाढ्य! इसी तरह आत्मा के गुण जले, तेरी शान्ति जल गई, जिसके फल से कभी पुण्य बंधा और उसके फल में धन मिला। अगर ऐसा धन अकेला खाएगा तो कौऐ से भी गया बीता हो जायेगा, इसलिये राग कम करके दान कर, नहीं तो कौए से भी हल्का हो जाएगा। यह बात वनवासी सन्त कहते हैं। मनुष्य भव और पैसा अधिक समय नहीं रहेगा, इसलिए सभी गुणों में दान उत्तम गुण है।

ज्ञानी का दान, दृष्टिपूर्वक राग कम करने के लिए है।

आत्मा का स्वभाव परमानन्द है, उस पर दृष्टि रखकर श्रावकधर्म का विकास होता है। उसमें दान का विशेष भाव आता है। गृहस्थधर्म में दान उत्तम गुण है। आनन्दस्वभाव पर दृष्टि होते हुए भी पूर्ण आनन्ददशा प्रकट न हो, तबतक धर्मी के देवपूजा आदि का राग आता है। उसके दान में यश या

सन्मान प्राप्ति की इच्छा नहीं रहती है। किसान दूसरों को दिखाने के लिए धूल में अनाज नहीं डालता। धरती के भीतर बीज बोया होगा तो मिट्टी को चीरकर फसल उगेगी। कोई मूर्ख दूसरों को दिखाने के लिए धूल पर ही बीज डाल दे तो बरसात की एक ही बौछार में बीज बह जायेगा; धरती के भीतर बीज बोया जाये तो फसल होगी; इसीप्रकार धर्मी जीव को दान का भाव दूसरों को दिखाने के लिए अथवा यश प्राप्ति के लिये नहीं होता। किसान को सन्तोष है और ज्ञान है कि बीज पर मिट्टी पड़ी है तथा अंकुर फूटकर बाहर निकलेंगे; उसी प्रकार धर्म का मूल गहरे वटवृक्ष की तरह है। आत्मा आनन्दकन्द है, उसके स्वभाव पर दृष्टि रखनेवाले को अन्त में केवलज्ञान प्रकट होता है; उस जीव को दान का भाव होता है। उसके ध्रुव स्वभाव के अवलंबन से अशुभ राग टलता है। अज्ञानी का शुभ छाजा के पौधे की तरह है जो कि अल्पकाल की निश्चित अवधि बाद सूख जायेगा।

ज्ञानी के दानादि शुभराग संसार से पार होने के लिए जहाज के समान है।

जिसे आत्मा का भान हुआ हो, ऐसे धर्मी को धर्मात्मा के लिये दान करने का भाव आए बिना नहीं रहता। उसके भाव दुनिया के हिसाब से नहीं, अपितु आंतरिक ध्रुवस्वभाव के साथ हैं। एक किसान ने अनाज बोया। उसके एक बीज के ९६ भुट्टे निकले थे। उसी प्रकार आत्मा की दृष्टि में सम्पत्ति पड़ी हुई है किन्तु पूर्ण वीतरागता नहीं हुई; इसलिए देव-गुरु-शास्त्र की प्रभावना के लिये दान देता है, वह दुनिया को दिखाने के लिये नहीं। अज्ञानी दस-बीस हजार देता है तो नाम की तख्ती लगाता है और सन्मान की इच्छा करता है। देव-पूजा आदि की भक्ति भी दान ही है उसमें पैसा लगाने का दान भाव बड़ा है, शुभ है।

आत्मभानपूर्वक अशुभ दूर हुआ, इसलिए दान संसार से पार होने के लिए जहाज के समान है।

गाथा -८

सर्वो वांछति सौख्यमेव तनुभृतन्मोक्ष एव स्फुटं।
दृष्टादित्रय एव सिध्यति स तन्निर्ग्रंथ एव स्थितम्॥

तद्वृत्तिर्वपुष्योऽस्य वृत्तिरशनात्तद्दीयते श्रावकैः।
काले क्लिष्टतरेऽपि मोक्षपदवी प्रायस्ततो वर्तते॥८॥

सभी जीव सुख की इच्छा करते हैं; वास्तविक सुख मोक्षदशा में है।

इस गाथा में निर्ग्रंथ मुनि को दान देने का कथन है। स्त्री-पुत्र के लिये कोई वस्तु लाना अशुभ की भक्ति है। आत्मा ज्ञानानन्दस्वभावी है—ऐसा भान ही निश्चय भक्ति है। देव-गुरु-शास्त्र की भक्ति शुभभक्ति है। श्रावक को धर्मात्मा के प्रति भक्ति आती ही है। 'धर्म धर्मी के बिना नहीं रहता।' इसलिए धर्मात्मा के प्रति श्रावक को प्रेम होता ही है। कल्याण मार्ग के राही जीव को दान का उत्साह आए बिना नहीं रहता। सभी जीवों की यह इच्छा रहती है कि सुख मिले, किसी को दुख पाने की इच्छा नहीं रहती। वास्तविक सुख मोक्ष में है, न कि धन-दौलत और प्रतिष्ठा में। पूर्ण निर्मलदशा में सुख है, यह निर्णय करना चाहिये। भाइयों में, स्त्री में, कुटुम्ब में, ग्राम में, अथवा पुण्य-पाप में सुख नहीं है। वास्तव में तो मोक्ष अवस्था में ही सुख है।

मोक्षदशा का कारण मुनियों का मोक्षमार्ग है; उसके स्थिर रहने में आहारदान परंपरा कारण है।

श्रावकों को सत्पात्र के लिये दान देना चाहिए। मोक्षदशा की प्राप्ति—पूर्ण आनन्द की प्राप्ति-सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र से होती है। आत्मा पूर्णानन्दस्वभावी है, ऐसी श्रद्धा सम्यग्दर्शन है, ऐसा ज्ञान सम्यग्ज्ञान है, उसमें लवलीनता सम्यक्चारित्र है। ऐसे रत्नत्रय की प्राप्ति निर्ग्रंथ अवस्था में होती है। ऐसे निर्ग्रंथ मुनि को दान देने का प्रकरण चल रहा है। धर्मात्मा जीव को अन्तर्दृष्टि प्राप्त है, इसलिये वह मोक्ष का साधक है। सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की एकता निर्ग्रंथ अवस्था में होती है। वह निर्ग्रंथ अवस्था शरीर रहे तो रहे, यह निमित्त का कथन है। धर्मी का लक्ष्य अन्य धर्मात्मा के प्रति जाता है। निर्ग्रंथ मुनि का शरीर, चारित्र में निमित्त होता है। अपने ज्ञानस्वभाव से सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र हो तो शरीर निमित्त कहलाता है। धर्मी की दृष्टि

स्वभाव पर है। उग्रदशा में साधना शरीर द्वारा हो, वह निमित्त है। नैमित्तिकदशा प्रकट की, इसलिये शरीर निमित्त कहलाता है। शरीर में निमित्त अन्न है, मुनि के वस्त्र, पात्र नहीं होते, ऐसे मुनि के शरीर टिकने में अन्न निमित्त है। अन्न खावे तो शरीर टिके—ऐसा नहीं है किन्तु शरीर रहे तो अन्न निमित्त है और अन्न श्रावक द्वारा दिया जाता है। धर्मी जीव को धर्मात्मा के प्रति उल्लास आए बिना नहीं रहता।

धर्मी 'सच्ची सगाई साधर्मी की' मानता है। स्त्री, पुत्र तो लूटने, खानेवाले हैं। वे कहते हैं कि हमारे लिए दुकान, धन, मकान आदि एकत्रित करते जाओ किन्तु ये सब पाप के निमित्त हैं। (यहाँ धर्मात्मा का धर्मी के लिए दान और प्रेम का प्रकरण चल रहा है) धर्मात्मा को श्रावकों द्वारा आहार प्राप्त होता है। लोभी श्रावक की बात नहीं है। इस दुषम काल में मोक्षपद की प्रवृत्ति प्रायः गृहस्थ द्वारा दिए हुए आहार दानादि से हो रही है, प्रायः कहने का तात्पर्य व्यवहार से है। मोक्षपद निश्चय से तो आत्मा के आश्रय से होता है किन्तु आहार, मुनि के शरीर में निमित्त है और उसमें श्रावकों का आहारदान निमित्त है; इसलिये श्रावकों से मोक्षपद की प्रवृत्ति हो रही है—ऐसा कहने में आता है।

रामचन्द्रजी को सीता के प्रति विशेष प्रेम साधर्मी के रूप में था, सीता को आत्मज्ञान था। सीता का हरण हो जाने पर रामचन्द्रजी जंगल में पूछते हैं 'हे वृक्ष! हे पहाड़! तुमने मेरी सीता देखी क्या?' पक्षियों आदि से भी पूछते हैं। उनका सीता से साधर्मिणी के नाते प्रेम था, धर्म-रस की प्रीति थी। अज्ञानियों को उनका इस प्रकार पूछना पागलपन जैसा लगता है। पीलिया रोग वाले को सफेद पत्थर भी पीले लगते हैं; इसी प्रकार अज्ञानियों को विपरीत लगता है। धर्मात्मा को धर्मी के प्रति अपनी भूमिका के अनुसार रागभाव आता है। इस अधिकार में श्रावक व्रत का प्रकाश किया है, ऐसा जानकर धर्मात्मा श्रावकों को सदैव सत्पात्रों को दान देना चाहिए।

अब आचार्य औषधिदान की महिमा कहते हैं—

गाथा-९

स्वेच्दाहारविहारजल्पनयतया नीरुग्वपुर्जायते।
साधूनां तु न सा ततस्तदपटु प्रायेण सम्भाव्यते।
कुर्यादौषधपथ्यवारिभिरिदं चारित्रभारक्षमं।
यत्तस्मादिह वर्तते प्रशमिनां धर्मो गृहस्थोत्तमात्॥९॥

श्रावक, मुनियों आदि को औषधदान देते हैं।

धर्मी जीव को धर्मात्मा के प्रति उल्लास आता है। जिस प्रकार अपने लिये औषध लेने का भाव होता है, उसी प्रकार धर्मात्मा के लिये औषधिदान करने का भाव होता है। मुनि इच्छानुसार भोजन या भ्रमण नहीं करता। भोजन की इच्छा होते हुए भी आहार न मिले, ऐसा हो सकता है। ऋषभदेव मुनिराज को छह माह तक आहार नहीं मिला क्योंकि लोग आहार की विधि नहीं जानते थे। जिनके इच्छानुसार भोजन, भ्रमण तथा भाषण आदि होते हैं, उनके शरीर में रोग होने की सम्भावना कम होती है। गृहस्थ इच्छानुसार आहार लेते हैं, इसलिये सर्दी हो तो अनुकूल आहार ले सकते हैं। गृहस्थ को गरम-गरम भोजन मिल सकता है किन्तु मुनि को ऐसी सुविधायें नहीं मिलती। इच्छानुसार भोजन मिले तो शरीर में रोग नहीं होवे, साथ ही साता का उदय हो, तभी ऐसा होता है; किन्तु मुनि को इच्छानुसार भोजन करने की आज्ञा नहीं है, वे हाथ में आहार लेते हैं। वे विहार भी इच्छानुसार नहीं कर सकते। वर्षा ज्यादा हो, बर्फ गिरता हो तो इच्छानुसार विहार नहीं कर सकते। गृहस्थों को सब प्रकार के साधन सुलभ हैं, किन्तु मुनि इच्छानुसार विहार नहीं करते। मैं ऐसा करूँ—ऐसी इच्छा उनके नहीं होती। वे उपदेश करते हैं किन्तु उपदेश में अपने लिए कुछ नहीं कहते, अतः उनका शरीर ज्यादातर अशक्त रहता है। 'प्रायेण' अर्थात् व्यवहार बतलाया है। धर्मात्मा श्रावकगण, मुनि को उत्तम दवा, पथ्य, निर्मल जल देते हैं और उन्हें चारित्र पालन करने में समर्थ बनाते हैं। जिस समय जड़ की पर्याय या आत्मा की पर्याय हो, उसे बदलने में कौन समर्थ है ? नहीं ! यहाँ श्रावक की भक्ति का प्रकाश किया गया है। मुनिधर्म की प्रवृत्ति श्रावक से होती है; इसलिये आत्महित के अभिलाषी जीवों को मुनिधर्म की प्रवृत्ति का कारण गृहस्थधर्म धारण करना चाहिए।

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

द्वितीय अधिकार (अजीव द्वार)

भाई! तू पैसे में नहीं और तेरे में पैसा नहीं है। राग में तू नहीं है और तेरे में राग नहीं है। इसलिए नाम से, पैसे से अथवा राग से अपना अस्तित्व मत मान! तू अपनी भेदज्ञान शक्ति से जीव और पुद्गल को भिन्न कर दे। 'पुद्गल' शब्द में राग भी साथ समझ लेना चाहिए। दया, दान, व्रत, भक्ति, करुणा, परोपकार आदि का विकल्प है, वह जड़ है। वह ज्ञान नहीं, अचेतन है। आत्मा की जाति से उसकी जाति भिन्न है। शरीर, वाणी और मन तो जड़-धूल है, आत्मा की वस्तु नही और न आत्मा के होकर रहते है। इसी प्रकार पुण्य-पाप का विकल्प भी आत्मा का होकर नहीं रहा है। वह भी आत्मा से भिन्न चीज है।

अनादि से शरीर और विकार को आत्मा का ही मानता था -यह तो इसका अज्ञान का नाटक था। त्यागी हुआ तो भी इसने अन्दर से राग की एकता नहीं मिटायी। तो वह त्यागी नहीं, बल्कि मिथ्यादृष्टि-भोगी है।

जिसको एकबार ज्ञाता-दृष्टा आनन्दकन्द प्रभु की दृष्टि हुई, पुद्गल से भिन्न पड़ गया, भेदविज्ञान हुआ, वह अब उसकी उन्नति करते-करते अन्तर में एकाग्रता बढ़ाते हुए अशुद्धता घटाकर अन्तर में शुद्धता बढ़ाते-बढ़ाते केवलज्ञान तक पहुँच जाता है। प्रथम मति-श्रुतज्ञान तो सम्यक् हुए हैं; शरीर, वाणी, मन, राग आदि से भिन्न पड़ा भेदज्ञान ही सम्यक् मति-श्रुतज्ञान है। तत्पश्चात् आगे बढ़ते हुए अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान और परमावधिज्ञान की दशा भी प्राप्त करता है।

लोगों को ऐसा लगता है कि यह किस प्रकार का धर्म है? जैनधर्म में तो कन्दमूल नहीं खाना, सचित्त (हरितकाय) वस्तु नहीं खाना, रात्रि में चार प्रकार के आहार का त्याग करना भूमि देखकर चलना, दया पालना, सत्य बोलना यह धर्म है, ऐसा सुना है। परन्तु भाई! यह धर्म नहीं है। यह भगवान

के घर की बात नहीं है। भगवान तो ऐसा कहते हैं कि इन विकल्पों से भी भिन्न होकर अन्दर में जा! विकल्प है वह राग है, जहर है, दु:ख है। वह तेरी वस्तु नहीं है। उनसे भिन्न पड़े तो प्रथम भेदज्ञान होगा। तत्पश्चात् क्रम-क्रम से अन्तर में एकाग्रता बढ़ने से अवधिज्ञान होता है कि जिस ज्ञान द्वारा असंख्य चौबीसी के जड़-चैतन्य के भावों को अपने में जानने की शक्ति प्रकट होती है।

भेदज्ञान होने से पश्चात् (धर्मीजीव) मुनि होता है। मुनि माने -जो आत्मा के आनन्द में रमे, शरीर और राग की क्रिया से भिन्न पड़कर स्वरूप की उग्र आनन्द दशा मे वर्तने लगे (वह मुनि है।) उनके बाह्य में वस्त्रादि छूट जाते हैं, नग्नदशा हो जाती है और अन्तर की आनन्ददशा बढ़ती जाती है -ऐसी मुनिदशा में किसी को मन:पर्ययज्ञान प्रकट हो जाता है। उसमें मुनि अन्य के मन की बात जान लेते हैं। मुनि को परमावधिज्ञान भी प्रकट होता है। परम अवधि अर्थात् जिसमें अन्य के असंख्यात भावों का ज्ञान कर सकते है।

आत्मा ही ज्ञान सरोवर है यह बात पूर्व में आ गयी है। ज्ञानसरोवर में (आत्मा) स्वयं ही कमल है और स्वयं ही उसकी सुगंध लेता है। कैसा है वह आनन्द ?कि जो चक्रवर्ती के राज्य में नहीं है, इन्द्र के इन्द्रपद में नहीं है, अर्थात् जगत में कहीं नहीं है -ऐसे अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव मुनि अपने आत्मा में करते हैं। उसके सामने इन्द्र, चक्रवर्ती का आनन्द तो जहर है। उससे भिन्न पड़कर तू भी अपने अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव कर! ऐसा संत फरमाते हैं। तीसरे काव्य में आ गया है कि-

'तेरो घट सर तामैं तू ही है कमल ताकौं
तू ही मधुकर व्हैं सुवास पहिचानु रे..।

तेरे देहरूपी घट में प्रभु विराजमान है, परन्तु अरे! जिसको इच्छा बिना चले नहीं, राग बिना चले नहीं, शरीर और उसकी अनुकूलता बिना चले नहीं- ऐसे भिखारी को यह परमात्मपद की बात कैसे जँचे ?

भाई ! तेरे आत्मसरोवर में अतीन्द्रिय आनन्द का कमल खिला है, इसलिए भँवरा होकर तू ही तेरी सुवास (सुगंध) ले। प्रथम में प्रथम यह करने योग्य है। अन्य कुछ प्रथम करने योग्य लगता है, तो यह तेरा अज्ञान है। अपने चैतन्य सरोवर में स्वयं ही कमल है और स्वयं ही उसकी सुवास लेनेवाला है। यह सुवास लेते-लेते ही आगे बढ़कर केवलज्ञान प्राप्त होता है।

जैसे आकाश में पहले चन्द्रमा की दूज उगती है; फिर तीज, चौथ, पंचम होते-होते पूर्णिमा हो जाती है। उसी प्रकार प्रथम रागादि से भिन्न पड़कर आत्मा में मति-श्रुतज्ञान की कला खिलना वह दूज है। आत्मा में ऐसी तो अनन्त चैतन्य कला विद्यमान है। आत्मा में अनन्त-अनन्त केवलज्ञान की कला भरी है। अन्दर में नजर डाले तो भगवान आत्मा अनन्त कला सहित विराजमान है। राग से भेदज्ञान करके ऐसे निज भगवान की सुवास ले, वह प्रथम धर्म (सम्यग्दर्शन) है। बाकी सब तो एक के बिना की शून्य है। समझ में आया ?

कहते हैं कि फिर यह भेदविज्ञान उन्नति करते-करते पूर्णस्वरूप के प्रकाशरूप अर्थात् केवलज्ञान स्वरूप हो जाता है। जैसे दूज उगी थी, वह बढ़कर पूर्णिमा हो जाती उसीप्रकार भेद-विज्ञान बढ़ते-बढ़ते अन्त में केवलज्ञानरूप पूर्णता को पाता है। जिसमें लोक-अलोक के समस्त पदार्थ प्रतिबिम्बित होते हैं। ज्ञानसागर भगवान आत्मा की कली अज्ञान दशा में संकुचित थी, उसको भेद-विज्ञान द्वारा शरीर और राग को भिन्न पाड़ने पर सम्यग्ज्ञान की प्रथम कला-भेदज्ञान कला प्रकट होती है। फिर तो अवधि, मनःपर्यय, परमावधि आदि कला भी खिलती है और इस मार्ग से पूर्ण केवलज्ञान कला भी खिलती है।

कल एक भाई थे वे कहते थे कि पूरी जिन्दगी चली गयी, किन्तु यह बात कभी सुनी नहीं थी।..ऐसा कहते हुए उनकी आँख में आंसू आ गये.... पूरी जिन्दगी राग की क्रिया में धर्म मानकर जिन्दगी गँवा दी।

एक मुमुक्षु:- बात सत्य है। किसी को धर्मी की सच्ची क्रिया का पता नहीं है।

पूज्य गुरुदेवश्री:- बात सच्ची है, परन्तु क्या हो ?

अब इस अजीव अधिकार का सार कहते हैं-

द्वितीय अधिकार का सार

मोक्षमार्ग में मुख्य अभिप्राय केवलज्ञान आदि गुण सम्पन्न आत्मा का स्वरूप समझाने का है। परन्तु जिस प्रकार सोने की परख समझाने के लिये सोने के सिवाय पीतल आदि का स्वरूप समझाना अथवा हीरा की परख समझाने के लिये हीरा के सिवाय कांच की पहिचान बताना आवश्यक है, उसी प्रकार जीव पदार्थ का स्वरूप दृढ़ करने के लिये श्रीगुरु ने अजीव पदार्थ का वर्णन किया है। अजीव तत्त्व जीव तत्त्व से सर्वथा विभिन्न है अर्थात् जीव का लक्षण चेतन और अजीव का लक्षण अचेतन है। यह अचेतन पदार्थ पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल के नाम से पाँच प्रकार है। उनमें से पीछे के चार अरूपी और पहिला पुद्गल रूपी अर्थात् इन्द्रियगोचर है। पुद्गल द्रव्य स्पर्श, रस, गंध, वर्णवंत है। यह जीव द्रव्य के चिह्नों से सर्वथा प्रतिकूल है, जीव सचेतन है तो पुद्गल रूपी है, जीव अखंड है तो पुद्गल सखंड है। मुख्यतया जीव को संसार संसरण करने में यही पुद्गल निमित्त कारण है, इन्ही पुद्गलोंमय शरीर से वह संबद्ध है, इन्हीं पुद्गलमय कर्मों से वह सर्वात्म प्रदेशों में जकड़ा हुआ है, इन्हीं पुद्गलों के निमित्त से उसकी अनंत शक्तियाँ ढँक रहीं हैं, पुद्गलों के निमित्त से उसमें विभाव उत्पन्न होते हैं, अज्ञान के उदय में वह इन्हीं पुद्गलों से राग-द्वेष करता है, व इन्हीं पुद्गलों मे इष्ट-अनिष्ट कल्पना करता है, अगर पुद्गल न होते तो आत्मा में अन्य वस्तु का सम्बन्ध नहीं होता न उसमें विकार व राग द्वेष होता न संसार संसरण होता, संसार में जितना नाटक है सब पुद्गल जनित है।

तुम शरीर में कहीं चिऊंटी से दबाओं तो तुम्हे बोध होगा कि हमें दबाया है -हमें दु:ख का बोध हुआ है। बस, यह जानने की शक्ति रखनेवाला जीव है वही तुम हो, चैतन्य हो, नित्य हो, आत्मा हो। आत्मा के सिवाय एक और

पदार्थ जिसे तुमने चिऊंटी से दबाया है वह नरमसा कुछ मैला कालासा कुछ खारासा कुछ सुगंध-दुर्गंधवान सा प्रतीत होता है उसे शरीर कहते हैं। यह शरीर जड़ है, अचेतन है, नाशवान है, पर पदार्थ है, आत्मस्वभाव से भिन्न है। इस शरीर से अहंबुद्धि करना अर्थात् शरीर और शरीर के संबंधी धन, स्त्री, पुत्रादि को अपने मानना मिथ्याज्ञान है। लक्षण भेद के द्वारा निज आत्मा को स्व और आत्मा के सिवाय सब चेतन-अचेतन पदार्थों को पर जानना ही भेदविज्ञान है, इसी का नाम प्रज्ञा है। जिस प्रकार राजहंस दूध और पानी को पृथक्-पृथक् कर देता है उसी प्रकार विवेक द्वारा जीव व पुद्गल का पृथक्करण करना पुद्गलों से अहंबुद्धि व राग-द्वेष हटाकर निजस्वरूप में लीन होना चाहिये और "तेरौ घट सर तामैं तूंही है कमल ताकौ, तूंही मधुकर है स्ववास पहचान रे।" वाली शिक्षा का हमेशा अभ्यास करना चाहिये।

क्रमशः

मङ्गलायतन के सम्बन्ध में जानकारी

फार्म नं० 4, नियम नं० 8

पत्रिका का नाम	: *मङ्गलायतन* (हिन्दी)
प्रकाशन अवधि	: मासिक
प्रकाशक का नाम	: स्वप्निल जैन (भारतीय)
पता	: 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश)
सम्पादक का नाम	: डॉ. सचिन्द्रकुमार जैन (भारतीय)
पता	: उपरोक्त
मुद्रक का नाम	: स्वप्निल जैन (भारतीय)
पता	: उपरोक्त
मुद्रण का स्थान	: *मङ्गलायतन* मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़- 202001
स्वामित्व	: स्वप्निल जैन, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उ.प्र.)

मैं स्वप्निल जैन एतद् द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपुर्यक्त विवरण सत्य हैं।

स्वप्निल जैन

दिनाङ्क : 01.04.2023 प्रकाशक

गतांक दिसम्बर 2022 से आगे

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

आचार्य वसुनन्दि इसी गाथा की आचारवृत्ति में कहते हैं—

तीर्थंकर गणधर आदि देवों ने जिसका वर्णन किया है, जिसमें बाह्य और अभ्यंतर छह-छह भेद है, ऐसे बारह प्रकार के तपों में स्वाध्याय के सदृश अन्य कोई तप:कर्म न है और न होगा ही। अत: स्वाध्याय परम तप है, ऐसा समझकर निरन्तर उसकी भावना करनी चाहिए।

आचार्य अमितगति कहते हैं—

स्वाध्याय: पञ्चधा कृत्य: पञ्चमी गतिमिच्छता।

अर्थात् पंचम गति जो सिद्धावस्था, उसकी इच्छा करनेवाले पुरुष को पाँच प्रकार का स्वाध्याय करना योग्य है। स्वयं अर्थात् आत्मा और उसका अध्याय अर्थात् पढ़ना अथवा भली प्रकार से शास्त्र का अध्ययन अर्थात् वाचना आदि करना, सो स्वाध्याय है। **(अमितगति श्रावकाचार, 13/81)**

आचार्य धर्मभूषण कहते हैं—

वैराग्यवर्धक शास्त्रों का पठन-पाठन करना स्वाध्याय है।

(जैनदर्शनसार, 1/11, पृ. 331)

चामुण्डरायजी कहते हैं—

स्वाध्यायस्तत्त्वज्ञानस्याध्ययनमध्यापनं स्मरणञ्च।

अर्थात् तत्त्वज्ञान को पढ़ना, पढ़ाना, स्मरण करना आदि स्वाध्याय है।

(चारित्रसार, 44/3)

स्वामी कार्तिकेय कहते हैं—

पूयादिसु णिरवेक्खो, जिणसत्थं जो पढेइभत्तीए।
कम्ममलसोहणट्ठं, सुयलाहो सुहयरो तस्स॥

अर्थात् जो मुनि अपनी पूजा आदि में निरपेक्ष होता है और कर्मरूपी मैल का नाश करने के लिए भक्तिपूर्वक जिनशास्त्र को पढ़ता है, उसको श्रुत का लाभ सुखकारी होता है। **(कार्तिकेयानुप्रेक्षा, गाथा 460)**

पण्डितप्रवर आशाधरजी कहते हैं—

नित्यं स्वाध्यायमभ्यस्येत्कर्मनिर्मूलनोद्यतः।
स हि स्वस्मै हितोऽध्यायः समयग्वाऽध्ययनं श्रुतेः॥

अर्थात् ज्ञानावरणादि कर्मों के अथवा मन, वचन, काय की क्रिया के विनाश के लिए तत्पर मुमुक्षु को नित्य स्वाध्याय करना चाहिए। क्योंकि 'स्व' अर्थात् आत्मा के लिए हितकारक परमागम के 'अध्याय' अर्थात् अध्ययन को स्वाध्याय कहते हैं। अथवा जब तक केवलज्ञान उत्पन्न न हो, तब तक सु अर्थात् सम्यक् श्रुत के अध्ययन को स्वाध्याय कहते हैं।

(धर्मामृत अनगार, 7/82, पृ. 534)

पण्डित सदासुखदासजी कहते हैं—

श्रुत के अर्थ का प्रकाश करना, व्याख्यान करना, स्वयं निरन्तर अभ्यास करना, दूसरों को अभ्यास कराना, वह स्वाध्याय तप है।

(रत्नकरण्ड श्रावकाचार, टीका, पृ. 307)

पण्डित अभ्रदेवजी कहते हैं—

जिस मनुष्य के दिन-रात शास्त्रों के अभ्यास करने से, दान देने से, पूजा करने से, और जीवों की रक्षा करने से व्यतीत होते हैं, उसका ही जन्म सार्थक है। **(व्रतोद्योतन श्रावकाचार, 187, पृ. 227)**

स्वाध्यायं पञ्चविधं वेलामालोक्य यो ऋषिः कुरुते।
कायोत्सर्गेण समं फलति विधानं तदा तस्य॥

अर्थात् जो ऋषि स्वाध्याय काल को देखकर पाँच प्रकार के स्वाध्याय को कायोत्सर्ग के साथ करता है, तब उसका सर्वविधान सफल होता है।

(व्रतोद्योतन श्रावकाचार, 291)

आचार्य वामदेवसूरि कहते हैं—

चतुर्णामनुयोगानां जिनोक्तानां यथार्थतः।
अध्यापनमधीतिर्वा स्वाध्यायः कथ्यते हि सः॥

अर्थात् जिनदेव प्ररूपित चारों अनुयोग रूप शास्त्रों का भक्तिपूर्वक यथार्थ रीति से जो अध्ययन और अध्यापन किया जाता है, वह स्वाध्याय नाम का आवश्यक कर्तव्य है। **(भावसंग्रह, 159)** **क्रमशः**

कवि परिचय

पण्डित भूधरदासजी

पण्डित भूधरदासजी का पार्श्वनाथ पुराण महाकाव्य है। इसकी रचना वि.सं. 1879 अषाढ़ सुदी 5 को आगरा में पूर्ण हुई। इसमें नौ अधिकार हैं। भगवान पार्श्वनाथ की जन्म से ही नहीं किन्तु पूर्वभवों से लेकर निर्वाणपर्यन्त की कथा है। सम्बन्ध निर्वाह है—कहीं शिथिलता नहीं। अवान्तर कथाएँ मुख्य कथा की पुष्टि और अभिवृद्धि करती हैं। जैसा प्रसाद और रूपक गुण पण्डित भूधरदासजी के साहित्य में जैसा मूर्ति मन्त हुआ, वैसा मध्यकाल के अन्य किसी कवि में नहीं। जैन कवियों के रूपक अधिकांशतया प्रकृति से लिए गए हैं। भूधरदास के 'मेरा मन सूवा जिनपद पींजरे वसि'; 'यार लाव न वार रे जगत जन हारि चले'; 'चरखा चलता नहीं चरखा हुआ पुराना' – में रूपकों का सौन्दर्य है।

भूधरदासजी के आध्यात्मिक फाग अत्यधिक प्रसिद्ध हैं। वात्सल्य रस से सम्बन्धित जैन कवियों की हिन्दी रचनाएँ भी अनूठी हैं। बालक के गर्भ और जन्म सम्बन्धी दृश्यों को जैन कवियों ने जैसा चित्रित किया है, सूरदास आदि छू भी नहीं सके हैं। भूधरदासजी इन चित्रों के सबसे बड़े कलाकार हैं।

जैनपद साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें निर्गुण और सगुण दोनों ही प्रकार के भक्तिभावों का समन्वय किया गया है। तुलसी के समान ही जैन कवियों ने भी अपने आराध्य देव से भव-भव में भक्ति की याचना की है। भूधरदासजी विविध छंदों के प्रयोग में निपुण थे। उन्होंने नरेन्द्र, व्योमवती के संगीत की लय के साथ प्रयोग किया है। उनके पदों में जहाँ एक ओर भावुकता है वहीं भक्ति, कवित्व व संगीत की त्रिवेणी भी बह रही है। भूधरदासजी ने आध्यात्मिक होली का रंग भी बहाया है।

जैन परम्परा में देवों को अमर नहीं कहते। यहाँ अमरता का अर्थ है

मोक्ष। भूधरदासजी ने इसी मोक्ष की कामना की है। भूधरदासजी की रचनाएँ अपने प्रसाद गुण और भाव लालित्य के लिए प्रसिद्ध है। जैन शतक, भूधर विलास, पदसंग्रह, जखड़ी, विनतियाँ, बारह भावनाएँ, बाईस परीषह, और स्तोत्र उनकी मुक्तक कृतियाँ हैं। वे आगरा निवासी खण्डेलवाल थे। विशेष परिचय प्राप्त नहीं हो सका। वादिराज मुनि के एकीभाव स्तोत्र का आपने बहुत ही भावपूर्ण पद्यानुवाद किया है। कविवर भूधरदासजी की एक कृति अपनी पहली पंक्ति से ही सर्व प्रसिद्ध है। 'राजा राणा छत्रपति' को कहते ही जैनदर्शन की सरल व्याख्याओं का सागर हमारे सामने लगराने लगता है। संसार की नि:सारता का यह वर्णन मन को छू लेनेवाला है।●

बाल वाटिका **प्रेरक प्रसंग**

सबको कुर्ते चाहिए

एक बार गाँधी जी स्कूल देखने गये। उन दिनों वह लँगोटी पहनने लगे थे। कन्धे पर एक चादर डाल लेते थे। उन्हें इस रूप में देखकर एक बच्चे ने कुछ कहा, परन्तु शिक्षक ने उन्हें रोक दिया। गाँधी जी सब कुछ देख रहे थे। उस बच्चे से बोले– 'तुम कुछ बोलना चाहते हो'?

वह बच्चा बोला– ''आपने कुर्ता क्यो नहीं पहना? मैं अपनी माँ से कहूँगा कि आपके लिए कुर्ता सिल देंगी। आप पहनेंगे न?''

गाँधी जी बोले ''जरूर पहनूँगा, लेकिन एक शर्त है बेटे! मैं अकेला नहीं हूँ।

बच्चे ने पूछा – ''तब आपको कितने कुर्ते चाहिए? दो! माँ से कहूँगा कि वह आपके लिए दो कुर्ते सीं देंगी।'' गाँधी जी ने कहा– मेरे चालीस करोड़ भाई–बहन हैं। उन सबको कुर्ते चाहिए। क्या तुम्हारी माँ चालीस करोड़ कुर्ते सिल सकेगी?''

वह बच्चा शायद कुछ समझ नहीं सका। गाँधी जी उसकी पीठ थपथपा कर चले गये, लेकिन शिक्षकों ने तो सब कुछ समझ ही लिया था।

शिक्षा– नेता वही होता है, जो सबके हित की भावना रखता है। अपना हितमात्र ही देखना तो स्वार्थ वृत्ति है। देश के नेता को कैसा होना चाहिए, इससे यह पता चल जाता है।

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– संसार में दूसरे लोग विपत्तियों के शिकार हो रहे हैं। बीमारी से, बुढ़ापे से,दरिद्रता से मरण से ग्रस्त हो रहे हैं।

उसी प्रकार– ये विपत्तियां मेरे ऊपर भी कभी भी आ सकती है। अतः तुरंत धर्म मार्ग में लग जाना योग्य है।

जिस प्रकार– भिखारी जहाँ–तहाँ भटकता है, कि कुछ मिल जाये।

उसी प्रकार– अज्ञानी जहाँ–तहाँ भटकता रहता है, मांगता रहता है कि धन मिल जाये, सुन्दर स्त्री मिल जाये, आज्ञाकारी बच्चे हो जाये, अच्छा मकान मिल जाये भिखारी की तरह मांगता रहता है।

जिस प्रकार– नन्दन वन सदा हरा–भरा रहता है।

उसी प्रकार– जिसे शरीर की ममता है, उसे तो संसार में जन्म–मरण होता ही रहेगा।

जिस प्रकार– कोई अपने शरीर को कीचड़ से यह सोच कर लपेटता है कि स्नान कर लूँगा, क्या यह सही है? ऐसा सोचना गलत ही है। मूर्ख ही गिना जायेगा।

उसी प्रकार– कोई पाप करके धन इसलिए कमायें कि दान दे दूंगा। क्या यह सही है? बिल्कुल नहीं।

जिस प्रकार– पद्मिनी स्त्री के पीछे भ्रमर फिरते हैं।

उसी प्रकार– मुक्ति अंगना प्राप्त करने के लिये समता, भ्रमर के समान उसके पीछे–पीछे फिरती है अर्थात् समता भ्रमर समान मुक्ति के प्रतिरत है।

जिस प्रकार– पूर्णमासी के चन्द्रमा को देखकर समुद्र उमड़ता है, पानी उछलता है अमावस्या के दिन चन्द्रमा के वियोग में सागर शान्त/उदास हो जाता है।

उसी प्रकार– आत्मा रूपी सागर में समता रूपी पूर्ण चन्द्र के उदय होने पर अतीन्द्रिय आनन्द रूपी जल की बाढ़ आ जाती है।

जिस प्रकार– नाव के सहारे से विशाल समुद्र से भी पार पा सकते है।

उसी प्रकार– परम तत्त्व की भावना से भी संसार समुद्र का किनारा पाया जा सकता है।

क्रमशः **संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की**

अप्रेल 2023 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

1 अप्रेल – चैत्र शुक्ल 11
श्री सुमतिनाथ जन्म-ज्ञान-मोक्ष कल्या.
3 अप्रेल – चैत्र शुक्ल 13
महावीर जयन्ती
4 अप्रेल – चैत्र शुक्ल 14
अनन्त चतुर्दशी
5 अप्रेल – चैत्र शुक्ल 15
दशलक्षण व्रत समाप्त
6 अप्रेल – चैत्र शुक्ल 15
श्री पद्मप्रभ ज्ञान कल्याणक
8 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 2
श्री पार्श्वनाथ गर्भ कल्याणक
13 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 8 **अष्टमी**
14 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 9
श्री मुनिसुव्रतनाथ ज्ञान कल्याणक
15 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 10
श्री मुनिसुव्रतनाथ जन्म-तप कल्याणक
19 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 14 **चतुर्दशी**
श्री नमिनाथ मोक्ष कल्याणक
20 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 15 अमावस्या
21 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 1/2
श्री कुंथुनाथ ज.त.मो. कल्याणक
पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी जयन्ती
22 अप्रेल – वैशाख कृष्ण 3
अक्षय तृतीया
26 अप्रेल – वैशाख शुक्ल 6
श्री अभिनंदननाथ गर्भ-मोक्ष कल्याणक
28 अप्रेल – वैशाख शुक्ल 8 **अष्टमी**
श्री धर्मनाथ गर्भ कल्याणक
28 अप्रेल – वैशाख शुक्ल 9
श्री सुमतिनाथ तप कल्याणक

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित
नौवीं पुस्तक की वाचना 7 फरवरी 2023 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम – आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई-बहिनों तथा मङ्गलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन) **षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि 07.30 से 08.30 बजे तक मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
08.30 से 09.15 बजे तक **समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्चारण सहित सामान्यार्थ**

● नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - tm@4321
youtube channel - theerthdham mangalayatan
के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

समाचार-दर्शन

श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ द्वारा

तीर्थधाम मङ्गलायतन में संचालित

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन

21वाँ प्रवेश साक्षात्कार शिविर सत्र 2023-24

(रविवार, 26 मार्च से शुक्रवार, 31 मार्च 2023)

अनादिनिधन जैनशासन एवं परम उपकारी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग से तीर्थधाम मंगलायतन में श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट द्वारा भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन का सफल संचालन विगत 21 वर्षों से किया जा रहा है। भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन का पावन उद्देश्य—पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा प्रतिपादित वीतरागी तत्त्वज्ञान के प्रति बालकों में रुचि जागृत कर निज आराधनापूर्वक आत्मसात्कर जन-जन तक पहुँचाने का सत्प्रयास किया जा रहा है। अनवरत उसी शृंखला में 21वाँ आध्यात्मिक प्रवेश साक्षात्कार शिविर **रविवार, 26 मार्च से शुक्रवार, 31 मार्च 2023** तक आयोजित किया जा रहा है। जिसमें आप श्री सादर आमन्त्रित हैं।

दैनिक कार्यक्रम

प्रात:	05.30 से 06.30	जागरण / स्नानादि	- प्रवेशार्थी छात्र
	06.30 से 08.15	जिनेन्द्र अभिषेक / पूजन	- बाहुबली मन्दिर
	09.15 से 10.45	सी.डी. प्रवचन	- स्वाध्याय भवन
	10.50 से 11.30	स्वाध्याय (विद्वान द्वारा)	- स्वाध्याय भवन
	10.50 से 11.30	धार्मिक कक्षा	- महावीर मन्दिर
दोपहर	02.00 से 02.45	स्वाध्याय	- स्वाध्याय भवन
	02.00 से 02.45	धार्मिक कक्षा	- महावीर मन्दिर
	03.00 से 04.45	खेल	
	06.15 से 07.00	जिनेन्द्र भक्ति	- बाहुबली मन्दिर
रात्रि	07.10 से 09.30	प्रतियोगिताएँ	- स्वाध्याय भवन

विद्वत् सान्निध्य : पण्डित जे.पी.दोशी, मुम्बई; बालब्रह्मचारी कल्पना बहिन, जयपुर; डॉ. योगेश जैन, अलीगंज; पण्डित ऋषभ शास्त्री, दिल्ली; मङ्गलार्थी अनिल जैन, पथरिया; शान्तनु जैन, नोएडा; शुद्धात्म जैन, भीलवाड़ा; सिद्धान्त जैन, करेली।

स्थानीय विद्वान् : पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सचिन जैन, पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र जैन, पण्डित समकित जैन, मङ्गलार्थी छात्र इत्यादि।

मुख्य आकर्षण : शिविर शोभायात्रा, ध्वजारोहण, शिविर उद्घाटन सभा, भजन, भाषण, प्रतिभा प्रदर्शन प्रतियोगिता इत्यादि।

कार्यक्रमस्थल : **तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़-आगरा राजमार्ग, सासनी-204216**

सम्पर्कसूत्र : पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200

वैराग्य समाचार

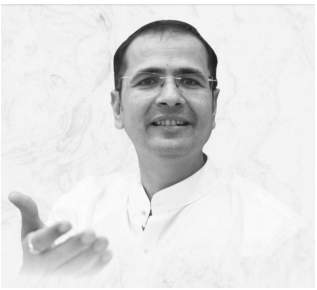

जयपुर : जैनदर्शन के अन्तर्राष्ट्रीय मूर्धन्य विद्वान आदरणीय डॉ.संजीव जी गोधा का शुद्धात्मा के भानपूर्वक शान्तपरिणामों से सहजता पूर्वक समाधि भावों से १७ फरवरी २०२३ को देह परिवर्तन हो गया।

आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के पुण्य प्रभावनायोग में आपने सम्पूर्ण जीवन तत्त्वज्ञान को समर्पित किया। आप स्वभाव से अत्यन्त सरल, जिनशासक प्रभावक एवं आपकी ओजस्वी शैली से सभी प्रभावित थे और देश- विदेश में आपके द्वारा तत्त्वज्ञान की महती प्रभावना में आप तन, मन, धन से संलग्न थे। आप में पण्डित टोडरमलजी की छाप दिखाई पडती थी वर्तमान में आप जैसा ओजस्वी विद्वान मुमुक्षु समाज में कोई दिखाई नहीं देता, जो लाखों जीवों को तत्त्वसुधा रसपान करावें और भव्य जीवों को सन्मार्ग में लगावें। आप शारीरिक स्वास्थ्य प्रतिकूल होने पर भी बड़ी निष्ठा से जिनवाणी की प्रभावना में संलग्न थे। आपको तीर्थधाम मंगलायतन से विशेष लगाव था इस कारण आमंत्रण पर तीर्थधाम मंगलायतन में भी आप कई बार पधारे। विगत दीपावली आपने मंगलायतन में मनायी थी।

आपका जीवन बचपन से ही धार्मिक, तत्त्वज्ञानमय था और पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से धार्मिक जीवन की शुरुआत की तभी से आप जिन शासन की महती प्रभावना में जुड गये और आप वीतराग विज्ञान व जैनपथ प्रदर्शक के आप सम्पादक थे हजारों शास्त्री विद्वानों के गुरू थे और वास्तव में जैन जगत के दैदीप्यमान नक्षत्र थे आपका सम्पूर्ण जीवन अनुकरणीय था आपकी क्षतिपूर्ति मुमुक्षु समाज को हमेशा खलती रहेगी हम भी आपको आदर्श बनावें।

हिंगोली : डॉ. प्रियंकरजी मुक्किरवार का शान्तपरिणामोंपूर्वक देहपरिवर्तन हो गया है। आपको पूज्य गुरुदेवश्री का सान्निध्य भी प्राप्त था। आपका सम्पूर्ण जीवन धर्ममय था, महाराष्ट्र में आपने विशेष तत्त्वप्रभावना की और विगत कुछ वर्षों से आप जयपुर को ही निवासस्थान बनाया था और आप धर्म आराधना में तत्पर थे।

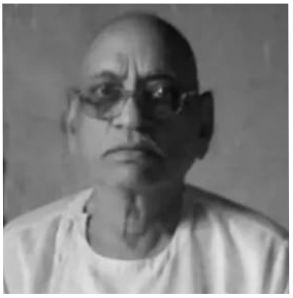

आप सोनगढ़ से प्रकाशित मराठी आत्मधर्म के सम्पादक थे।

इटावा : मङ्गलार्थी आदित्य जैन।
दिनांक – 17 फरवरी 2023

गुना : मङ्गलार्थी सन्मति जैन।
दिनांक – 23 फरवरी 2023

का शान्तपरिणामोंपूर्वक देहपरिवर्तन हो गया है। देह में असहनीय पीड़ा होने पर भी देह से भिन्न पंच परमेष्ठी की आराधनापूर्वक दोनों मङ्गलार्थी भाईयों ने शान्तपरिणामोंपूर्वक देहपरिवर्तन किया। आप तीर्थधाम मङ्गलायतन परिवार के अभिन्न अंग थे। आपको मङ्गलायतन सदैव स्मरण रखेगा।

बण्डा : श्रीमती मुन्नीदेवी जैन का शान्तपरिणामोंपूर्वक देहपरिवर्तन हो गया है। आप पण्डित धर्मेन्द्र शास्त्री की माताजी थीं।

उज्जैन : पण्डित अशोकजी उज्जैन की माताश्री का शान्तपरिणामोंपूर्वक देहपरिवर्तन हो गया।

दिवंगत आत्माएँ शीघ्र ही मोक्षमार्ग प्रशस्त कर अभ्युदय को प्राप्त हो—ऐसी भावना मङ्गलायतन परिवार व्यक्त करता है।

नवीन संस्करण का प्रकाशन

तीर्थधाम मङ्गलायतन : साहित्य प्रकाशन की शृंखला में **मङ्गल भक्ति सुमन** का भारी माँग पर पुनःप्रकाशन किया जा रहा है। जिसमें देव-शास्त्र-गुरु को समर्पित अद्वितीय पाँच सौ भक्तियों के संकलन के साथ प्राचीन कवियों के भजन, बड़े पण्डितजी द्वारा रचित आध्यात्मिक पाठों का अनूठा संग्रह का पुनः प्रकाशन किया जा रहा है। **जिसकी कीमत 80.00 रुपये है।**

साथ ही दैनिक पूजन-पाठ के संकलन के साथ **मङ्गल अर्चना** का भी पुनः प्रकाशन का कार्य चल रहा है। जिसमें समस्त पूजनों का संग्रह किया गया है।

पुस्तकें सीमित होने से आप अतिशीघ्र अपनी प्रतियाँ सुरक्षित कर लेवें।

सम्पर्कसूत्र–

पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200
पण्डित अभिषेक शास्त्री, 7610009487
Email : info@mangalayatan.com

तीर्थधाम मंगलायतन से प्रकाशित एवं उपलब्ध साहित्य सूची

मूल ग्रन्थ–

1. समयसार वचनिका
2. प्रवचनसार (हिन्दी, अंग्रेजी)
3. नियमसार
4. इष्टोपदेश
5. समाधितंत्र
6. छहढाला (हिन्दी, अंग्रेजी सचित्र)
7. मोक्षमार्ग प्रकाशक
8. समयसार कलश
9. अध्यात्म पंच संग्रह
10. परम अध्यात्म तरंगिणी
11. तत्त्वज्ञान तरंगिणी
12. हरिवंशपुराण वचनिका
13. सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन

1. प्रवचनरत्न चिन्तामणि
2. मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन
3. प्रवचन नवनीत
4. वृहद्द्रव्य संग्रह प्रवचन
5. आत्मसिद्धि पर प्रवचन
6. प्रवचनसुधा
7. समयसार नाटक पर प्रवचन
8. अष्टपाहुड़ प्रवचन
9. विषापहार प्रवचन
10. भक्तामर रहस्य
11. आतम के हित पंथ लाग!
12. स्वतंत्रता की घोषणा
13. पंचकल्याणक प्रवचन
14 मंगल महोत्सव प्रवचन
15. कार्तिकेयानुप्रेक्षा प्रवचन
16. छहढ़ाला प्रवचन
17. पंचकल्याणक क्या, क्यों, कैसे?
18. देखो जी आदीश्वरस्वामी
19. भेदविज्ञानसार
20. दीपावली प्रवचन
21. समयसार सिद्धि
22. आध्यात्मिक सोपान
23. अमृत प्रवचन
24. स्वानुभूति दर्शन
25. साध्य सिद्धि का अचलित मार्ग
26. दशधर्म प्रवचन
27. वह घड़ी कब आयेगी
28. अहो भाव!

पण्डित कैलाशचन्द्रजी का साहित्य

1. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग 1 से 7) (हिन्दी गुजराती)
2. मंगल समर्पण
3. मंगल पत्रांजलि
4. मंगल संबोधन
5. मंगल दैनन्दिनी
6. मंगल देशना

अन्य

1. फोटो फ्रेम (पूज्य गुरुदेवश्री, बहिनश्री)

2. सी.डी.

3. मंगल भक्ति सुमन
4. मंगल उपासना
5. करणानुयोग प्रवेशिका
6. धन्य मुनिदशा
7. धन्य मुनिराज हमारे हैं!
8. प्रवचनसार अनुशीलन
9. पंडित टोडरमल
10. वस्तुविज्ञानसार
11. अध्यात्मत्रिपाठ संग्रह

बाल साहित्य (कॉमिक्स)

1. कामदेव प्रद्युम्न
2. बलिदान
3. मंगल प्रज्ञा (भाग 1, 2, 3)
4. मंगल शासन (भाग 1, 2)
5. मंगल प्रभावना (भाग 1, 2)

उपरोक्त साहित्य सभी मन्दिरों, ट्रस्ट, संस्थानों, विद्यालयों, पुस्तकालयों और साधर्मी भाई–बहिनों को स्वाध्यायार्थ निःशुल्क दिया जायेगा। – डाकखर्च आपका रहेगा।

सम्पर्क –

सम्पर्कसूत्र–पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; पण्डित अभिषेक शास्त्री, 7610009487

Email : info@mangalayatan.com

श्रीमान सद्धर्मानुरागी बन्धुवर,

सादर जयजिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार!

आशा है आराधना-प्रभावनापूर्वक आप सकुशल होंगे।

वीतरागी जिनशासन के गौरवमयी परम्परा के सूत्रधार पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में निर्मित आपका अपना **तीर्थधाम मङ्गलायतन** बीस वर्षों से, सुचारुरूप से, अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर गतिमान है।

वर्तमान काल की स्थिति को देखते हुए, अब **मङ्गलायतन** का जीर्णोद्धार एवं अनेक प्रभावना के कार्य, जैसे-भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, भोजनशाला, **मङ्गलायतन** पत्रिका प्रकाशन आदि कार्यों को सुचारू रूप से भी व्यवस्था एवं गति प्रदान करना है। यह कार्य आपके सहयोग के बिना, सम्भव नहीं हैं। इसके लिए हमने एक योजना बनायी है, जिसमें आपको एक छोटी राशि प्रतिमाह दानस्वरूप प्रदान करनी होगी। इस योजना का नाम - **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** रखा गया है। हम आपको इस महत्त्वपूर्ण योजना में सम्मानित सदस्य के रूप में शामिल करना चाहते है। **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** में आपको प्रतिमाह, कम से कम मात्र एक हजार रुपये दानस्वरूप देने हैं।

इस योजना के माध्यम से आप हमें प्रतिमाह 1,000 (प्रतिवर्ष 1000X12=12,000) रुपये दानस्वरूप देंगे। भारत सरकार ने **मङ्गलायतन** को किसी भी रूप में दी जानेवाली प्रत्येक दानराशि पर, आयकर अधिनियम की धारा 80जी के अन्तर्गत छूट प्रदान की है। आप इस महान कार्य में सहभागिता देकर, स्व-पर का उपकार करें।

आप इसमें स्वयं एवं अपने परिवारीजन, इष्टमित्र आदि को भी सदस्य बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। साथ ही **तीर्थधाम मङ्गलायतन** द्वारा संचालित होनेवाले कार्यक्रमों में, आपकी सहभागिता, हमें प्राप्त होगी।

आप यथाशीघ्र पधारकर यहाँ विराजित जिनबिम्बों के दर्शन एवं यहाँ वीतरागमयी वातावरण का लाभ लेवें - ऐसी हमारी भावना है।

हार्दिक धन्यवाद एवं जयजिनेन्द्र सहित

अजितप्रसाद जैन	**स्वप्निल जैन**	**सुधीर शास्त्री**
अध्यक्ष	महामन्त्री	निदेशक

मङ्गल वात्सल्य-निधि

सदस्यता फार्म

नाम .....

पता .....

..... पिन कोड .....

मोबाइल ..... ई-मेल .....

मैं **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं ..... राशि जमा करवाऊँगा / दूँगा।

हस्ताक्षर

''चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय''

ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव,
तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।
इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,
द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः॥

अर्थात् गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब मैं लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा, तब दान दूँगा; बल्कि जितना धन हमारे पास है, उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए। – आचार्य पद्मनन्दि : पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, श्लोक 230

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं –

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST

Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/
3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित
भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के गौरवशाली मङ्गलार्थी
कक्षा 9 वीं

Dhruv Jain
Dharmik - 96.14
school - 72.20
S/o Shri Rakesh Jain
Ratlam (M.P.)

Parv Jain
Dharmik - 94.00
school - 85.80
S/o Shri Mohan Jain
Delhi

Soham Jain
Dharmik - 93.42
school - 86.40
S/o Shri Kapil Jain
Damoh (M.P.)

Prasham Godha
Dharmik - 92.28
school - 90.20
S/o Shri Shrish Godha
Indor (M.P.)

Samyak Jain
Dharmik - 86.00
school - 74.20
Shri Rahul Jain
Harpalpur (MP.)

Shreyash Jain
Dharmik - 78.57
school - 77.00
S/o Shri Praveen Jain
Bharthana (U.P.)

Tejas Jain
S/o Shri Abhishek Jain
Khaniyadhana (M.P.)

Virat Chauhan
S/o Shri Pankaj Chauhan
Aliganj (U.P.)

Aarjav Jain
S/o Shri Rajeev Jain
Katni (MP.)

Harshit Jain
S/o Sanjeev Kr. Jain
Gursarai (U.P.)

Rishi Jain
Shri Abhishek Jain
GurSarai (U.P.)

Aradhya Jain
S/o Shri Mohit Jain
Sultanpur (U.P.)

Lakshya Jain
S/o Shri Amit Jain
Guna (M.P.)

Saransh Jain
S/o Shri Sanjeev Jain
Khaniyadhana (M.P.)

Aayush Gupta
S/o Shri Saurabh Gupta
Faridabad (Hr.)

तीर्थधाम मङ्गलायतन परिवार की ओर से सभी मङ्गलार्थी छात्रों को उनके उज्ज्वल भविष्य हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ।

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

श्रमण अर्थात् साक्षात् मोक्षतत्त्व

जो श्रमण, त्रिलोक के मुकुटमणि के समान निर्मल विवेकरूपी दीपक के प्रकाश द्वारा, यथास्थित पदार्थ के निश्चय द्वारा, उत्सुकता को छोड़कर स्वरूप में स्थिर हो गये हैं, आनन्द की धारा में मस्त हो गये हैं, उपशमरस के साँचे में ढल गये हैं और उसमें से बाहर आने में निरुद्यमी हो गये हैं; वन में बाघ, सिंह और भेड़िये चिंघाड़ते हो, तथापि निर्भय होकर स्वरूप के शान्तरस का, अतीन्द्रिय आनन्द का पान करते हैं, चूसते हैं, एक स्वरूप में ही अभिमुख होकर वर्तते हैं, उन श्रमण को साक्षात् मोक्षत्तत्व कहते हैं।

(- द्रव्यदृष्टि जिनेश्वर, ४८४, पृष्ठ ११५)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust

Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22

info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com